॥संस्कृतस्तवनम्॥

॥प्रथमम्॥

॥श्री गणपति गीतम्॥

जय जय गौरी हरतनय
जय जय मङ्गल वरनिलय॥ध्रुवपदम्॥
रम्य चतुर्भुज शुभमूर्ते
वेद चतुष्टय नुतकीर्ते॥१॥
पाशाङ्कुशरद वरदकर
पादपतित भव भीतिहर ॥२॥
एकदन्तलसदिभवक्त्र
कुङ्कुमरञ्जित वरगात्र॥३॥
आरवुध्वज लोहितवर्ण
लम्बोदर शूर्पककर्ण ॥४॥
देवदेवसुरयूथपते
दैवरात हृदयाब्जरते॥५॥

****

॥द्वितीयम्॥

॥श्री गणपति गीतम्॥

गजमुख तवचरणं स्मरणीयं
शरणं शुभकरमाश्रयणीयम्॥
सिद्धिविनायक देहि सुबुद्धिं
कुरु मे सर्व मनोरथ सिद्धिम्॥ ॥१॥

पर्वतराज सुतावर पुत्रं
त्वामिह कवयो जगुरिभवक्त्रम्॥
मृण्मयमधिभूतं गणराजं
चानक तत्व विदोविदुरब्जम्॥ ॥२॥

त्वामिह देवगणानामधिपं
योनिं विदुरधिदैवतमग्निम्॥
प्राणं परमथ वागादीनां
ज्येष्ठराजानं वरकरणानाम्॥ ॥३॥

त्वामधि विद्यां ज्ञानगणानां
विद्यानामधिपतिमखिलानाम्॥
अथ विद्या श्रुतिमति धृतमन्तं
भगवन्तं मेधाकृतिमन्तम्॥ ॥४॥

मूलाधारे संस्थितवन्तं
ह्यमृतानन्द प्रजननवन्तम्॥
प्रजनयितारं तं प्रजनानां
प्रतिमाहुस्तं जीवगणानाम्॥ ॥५॥

अधिपतनाकृत शब्दगणेयत्
ब्रह्मणि भवता पदमभि निहितम्॥
तत्परिमातुं ज्ञातुं मुनयो
मनसीयत्वं वचसे चक्रुः॥ ॥६॥

प्राणेष्वपिपर योगविदस्ते
चक्षुषि केचिद्वपुषितथान्ते॥
केचिद्वाग्भिर्मन्त्रमयीभिः
केचिद् व्यक्तिभिरपिसन्मतिभिः॥ ॥७॥

एवं किमिदं पदमविदित्वा
क्षुप्त्वा जप्त्वा किं पदमुक्त्वा॥
अथ तत्परमं पदमवगत्या
लब्ध्वा सुखमनसितमिहकृत्वा॥ ॥८॥

यस्मै सविनयमिह निखिलास्तॆ
दॆवाः स्वयमञ्जलिमा दधतॆ॥
वृन्दारक गणपतयॆ महतॆ
कस्मै गतमिदमस्तु नमस्तॆ॥ ॥९॥

भवतु कवीनां प्रणतिः कवयॊ
मॆधाकृतयॆ सदसस्पतयॆ॥
अज्ञानाङ्कं तिमिरं हरतॆ
ज्ञानकरैर्ज्वलतॆऽमर वरतॆ॥ ॥१०॥

तॆजॊमय वाचामिह पतयः
तत्तः परितॆ जगतः सृष्टः॥
आदिमयाति विदॆह मनूनां
सृष्टिरियं विधिता प्रजनानाम् ॥११॥

यत्तॆ गिरिजा तनुमलजत्त्वं
तद्विदुरब्जं पार्थिव तत्त्वम्॥
हैमवतीमा वॊमयमूर्तिं
प्राणौरिभ मुखतव जननी ॥१२॥

अथ तॆजॊमयमपि हिमवन्तं
नगराजं जननीं जनकं तम्॥
रुद्रं मध्यम लॊकपतिं तॆ
जनकं वैद्युतमिन्द्रं ब्रुवतॆ ॥१३॥

दॆवदॆव सुरमङ्गलमूर्तॆ
दैवरात सुहृदन्तरगीतॆ॥
गजमुख तव चरणं स्मरणीयं
कुरु मे सर्वमनॊरथ सिद्धिम्॥ ॥१४॥

****

॥तृतीयम्॥

॥श्री जगदम्बा गीतम्॥

जगदम्बे महामाये हरजाये पाहिमाम्॥
परमेश्वरार्धशरीरे परिपूर्ण सौख्यगभीरे।
अतिधीरे महावीरे सुसमीरे पाहिमाम्॥१॥
निखिलात्म चिन्मयगात्रे शशिसूर्यपावकनेत्रे।
चितिमात्रे महासूत्रे सुपवित्रे पाहिमाम्॥२॥
जगदादिदेवि वदान्ये मुनिदेवमानवमान्ये।
चितिजन्ये महाधन्ये चिदिनन्ये पाहिमाम्॥३॥
सुरदेवि मङ्गलमूर्ते परमात्मबोधविभूते।
श्रुतिगीते महाकीर्ते परिपूर्ते पाहिमाम्॥४॥
परमन्त्ररूपकवर्णे मनुराज्ञि पञ्चदशार्णे।
ससुवर्णे प्रभापूर्णे महदर्णे पाहिमाम्॥५॥
अयि वेदशास्त्र निगद्ये सकलार्तिहारि सुपद्ये।
मधुविद्ये महावेद्ये जनहृद्ये पाहिमाम्॥६॥
सुरसज्जनादि सुरक्षे खलदुर्जनादि सुशिक्षे।
श्रुतिपक्षे महादीक्षे बहुदक्षे पाहिमाम्॥७॥
निजधर्मतत्पर रक्षे परधर्मतत्पर शिक्षे।
निरपेक्षे शुभापेक्षे करुणेक्षे पाहिमाम्॥८॥
जगदम्ब ते शुभचरणं सुहृदस्तु मे हृदिशरणम्।
अनुविन्नं सदापन्नं सुशरण्यं पाहिमाम्॥९॥
अयि दैवरात शरण्ये जयदेवदेवि वरेण्ये।
सुरसैन्ये सुखारण्ये सुहिरण्ये पाहिमाम्॥१०॥

****

॥चतुर्थम्॥

॥श्री जगदम्बिका गीतम्॥

॥आद्यं मङ्गलपद्यम्॥

भगवति जयजगदम्बिके
पालयमामवलम्बिके॥
भगवति जयजगदम्बिके॥

शारद पौर्णिम सोमसुनिर्मल
वदनकमल मधुकुण्डिके॥
भगवति जयजगदम्बिके॥१॥

मेघसुनीलिम नलिनदलायन
नयनरसाञ्जन रञ्जिते॥
भगवति जयजगदम्बिके॥२॥

हालाहलमय फणिवरतुलना
भावित सुललित चूडिके॥
भगवति जयजगदम्बिके॥३॥

सर्वचराचर जीवपयोनिधि
घनकुचमण्डल मण्डिते॥
भगवति जयजगदम्बिके॥४॥

शारदशशिकर कलितदिगम्बर
भास्वर भसितदुकूलिके॥
भगवति जयजगदम्बिके॥५॥

मन्दकलाशकलेन्दुकलाङ्कित
श्यामल वारिद चूडिके॥
भगवति जयजगदम्बिके॥६॥

पौर्णिम शशिरवि नयनयुगलयुत
वह्निचितात्यम लालिके॥
भगवति जयजगदम्बिके॥७॥

चण्डाद्य सुरगणान्वयमूलं
कर्तयसि प्रतिचण्डिके॥
भगवति जयजगदम्बिके॥८॥

मुण्डाद्यसुरगणोच्चसुशीर्षैः
मण्डितरुण्डसुमालिके॥
भगवति जयजगदम्बिके॥९॥
भण्डासुरवधनिर्गतलोहित
लेपित ललित सुचूडिके॥
भगवति जयजगदम्बिके॥१०॥
तेजोगुणमय कुङ्कुमचर्चित
लोहित तनुघन चूडिके॥
भगवति जयजगदम्बिके॥११॥
दैवरातहृदयाब्जविकासक
शीतलकिरणालम्बिके॥
भगवति जयजगदम्बिके॥१२॥

****

॥पञ्चमम्॥

॥दॆवी श्रीमाता गीतम्॥

श्रीमातः परमॆश्वरि ललितॆ
बृहदभि लसितॆ दॆवि नमस्तॆ॥
शक्तिस्त्वं परमस्य हि परमा
द्दष्टिमहीहसती प्रकृतिरुमा॥१॥

अयि विधि हरि हर दॆविवदान्यॆ
भगवति गुणत्रय रूपिणि धन्यॆ॥
पाहिपुनीहि महॆशिवरॆण्य्
मामनुशाधि न जहीहि शरण्यॆ॥२॥

त्वां समुपत्य हि शरणमिदानीं
स्तौमि भजामि नमामि भवानि॥
काली तारा ललिता भुवनॆ
शानी त्रिपुरा च्छिन्ना ज्यॆष्ठा॥३॥

भगला मातङ्गी कमलात्मा
सैषा त्वं परशक्तिर्दशधा॥
पत्तुः कालात्मन् इह शक्त्या
काली त्रिपदधिका त्वं प्रियया॥४॥

कालात्मा जगतामिह शक्ति
कालॆ त्वं स्वयमुपसंहर्त्री॥
प्राणमयी साध्यात्मिक रूपा
वैद्युत कलया त्वं कृतिरूपा॥५॥

ईशानी परदैवत मूर्त्या
कालात्मा कथितॆहसमष्ट्या॥
क्रॊधीसॆस्वनुरक्ता काली
क्रॊधीन्यास हतॆतु कराली॥६॥

शान्तिमता शशिना सुवदन्ती
शान्तिमतीमिह वाचन्दधती॥
कालीसॆयं दैवत भक्त्या
वाग्रसकेन हि रसमनुपास्य॥७॥

आत्मनिवृत्तिं प्राणमयी सा
तपसा विधितास्वषितेॆ नैषा॥
कालीत्वमिह करोॆतीत्यनया
द्दष्टी हर्त्री शक्त्या क्रियया॥८॥
बीजात्मानं तदिहविदुःस्त्वां
क्लीमिति कुर्वन्तीमखिलात्मा॥
अयि मातः परमन्त्रस्वरूपकवर्णे
जय वागीश्वरी पञ्चदशार्णे॥९॥
अयि भगवति परिपूर्ण विकासेॆ
जयपरमानन्दामृतहासे॥
देॆवी महादेॆवान्त निवासेॆ
दैवरात हृदयाब्ज विलासेॆ॥१०॥
श्रीमातः परमेॆश्वरि ललितेॆ
बृहदभिलसितेॆ देॆवि नमस्तेॆ॥

****

॥षष्ठम्॥

॥वागीश्वरि गीतम्॥

जय जय जय वागीश्वरि वेदवदनहासे।
वद वद मम विमल वदन वेदि सदन वासे॥
    परम पुरुष सुरसभरित परमविभव मूर्ते।
    परम सुखद निगम सुगम परममहिमकीर्ते॥१॥
सकलगुणद मधुररसद नन्दनवनगीते।
समरसमय परमनिनद नन्दनयननीते॥२॥
    मञ्जुलकल कलितललित वाणीनदनीते।
    मन्दमधुर रुचिरचतुर वीणानदगीते॥३॥
सरिगमपधनीति सप्तसुस्वर मधुगीते।
सनिधपमगरीति सेति लोम विवृतिनीते॥४॥
    प्राणनगुण वचनवदन मानस सुविनीते।
    त्राणनमनु मनननदन मानन मुनिगीते॥५॥
निर्मल शरदिन्दु ललित भसित ललितकीर्ते।
कुन्दरहित मन्दहसित नन्दितविधुमूर्ते॥६॥
    निजपररस संविदमृतानन्दनिधि विभूते।
    निजपद परमेन्दु सुरसबिन्दु विरतरीते॥७॥
मय रस तज भन लघु गुरु सम्मितगुणपूर्णे।
नय गुण मय यति नुति गुरु सम्मति गति गीर्णे॥८॥
    छन्दसि गुण नियमित वद संहित मनुमूर्ते।
    छान्दस पर गुण गण पद संहित मुनिकीर्ते॥९॥
वीणाक्षर सुस्वर वरपुस्तक कर पूर्णे।
वाणी स्वर भूरभयद हस्त लसद पूर्णे॥१०॥
    छान्दस ऋक् सामक यजुराथर्वण वदने।
    छान्दस पर सोम सुरस दर्शन मधुवचने॥११॥
दैवतेन्द्र सार्वभौम वेदनिनद मूर्ते।
दैवरात वाग्रसार्ण वेद विनुत कीर्ते॥१२॥

****

॥सप्तमम्॥

॥वागीश्वरी गीतम्॥

जय जय जय वागीश्वरि वेदवदनहासे।
वद वद मम विमल हृदय वेदिसदनवासे॥
नद नद निजनामधमन नाद निगद तारे।
वद वद वद वाग्वादिनि वेद वदन तारे॥१॥
वाणीस्वर मधुर रसद नाद किरण भासे।
वाणीपर वेदविशद हस्तकरण भासे॥२॥
मालाकृति जापनिरत वर्ण विकृत पाणे।
प्राणास्पद विमल ललित पूर्णकलशपाणे॥३॥
शारदनिभ चन्द्रवदन मन्दमधुरहासे।
इन्दु कलापूर्ण ललित भाल तिलक भासे॥४॥
सोमानल सूर्य नयन कञ्ज विमलकाशे।
कामानिल पूर्ण वचन पूरित चतुराशे॥५॥
नामामृत रसिक सुजन मानसरतहासे।
ज्ञानामृत पान निरत मानस मुनिहंसे॥६॥
छन्दसि समभावनदृशि संविदुदितभासे।
छान्दस मनुमन्त्रण दिशि सहितरसहासे॥७॥
देववाचि विजय कवन नामभजन गीते।
दैवरात हृदय वचन वागीश्वरि गीते॥८॥

****

॥अष्टमम्॥

॥श्री सुरभारती गीतम्॥

श्रीमती सुरभारती दिवि भास्वती दिशि भास्वती।
श्रीयतां हृदि धीमती भुवि भामती प्रति शाश्वती॥१॥
श्रूयतां स्वरसद्रसेष्टा छान्दसीन्द्र सरस्वती।
श्राव्यतां वचसा विशिष्टा सस्वरेण सरस्वती॥२॥
शंवतीशिवहृत्सतीष्टा संविदाऽऽत्मनि शश्वती।
शंवता मनसाऽऽत्मशिष्टा शाश्वतेन यशस्वती॥३॥
नामतः परमाऽवशिष्टा मानवाचि मनस्वती।
नामरूप सुभावशिष्टा मानदाऽत्र महस्वती॥४॥
वेदवाक् परदेवतात्मनि देवतात्मव शंवदा।
देवतात्म परामृतात्मनि वेदवाग्रस संविदा॥५॥
दैवतेन्द्र पराचिदात्मनि वेदमातृ चिताहृदा।
दैवरात हृदन्तरात्मनि राजते निरतामुदा ॥६॥

****

॥नवमम्॥

॥शिवताण्डव नर्तन स्तोत्रम्॥

ब्रह्मानन्द भरेण शान्ति कलया गौर्या स्वशक्त्या शिवः
ब्राह्मी ताण्डव नर्तने चिदुमया योगैकनिष्ठाश्रयः॥
ब्रह्मण्यात्मनि विश्वहृद्विलयनान् सम्भूयपूर्णे विभौ
बाह्याभ्यन्तर मुद्रयाऽऽत्मपरया शान्तः प्रसन्नो बभौ॥१॥

सर्वेषां हृदये सदैवरमते नृत्यन्त्स्वचित्योल्लये
सर्वान् नर्तयति प्रभुर्निजरते ब्रह्माण्डनृत्यालये॥
नृत्यात् पश्यति साक्षिकोऽखिलजनान् स्तंनैवपश्यन्त्यया
नृत्यन्तं प्रतिनर्तयन्त परमं दृष्ट्वैव धन्याः समे॥२॥

स्वान्तर्ध्यान परायणः सुमनसा स्वानन्द सत्त्वोदिनः
स्वीयैः प्राणगणैः सुधीन्द्रिय गुणैः चिद्योग सत्त्वाञ्चितः॥
स्वान्तध्यान समधि सत्त्वमहसा हृद्योगतां प्रत्यतः
स्वान्तसंविदि सामरस्य कलया सम्राजते नृत्यतः॥३॥

कैलासे च परावरे रसपरे सन्त्सोमरस्यान्तरे
लीलासत्त्व सरोवरे परतरे सन्मानसे स्वान्तरे॥
श्रीगौर्या निजवाचकात्मकलया लक्ष्ये सुलीनोऽन्तरे
श्रीरुद्रः शशिशेखरो विरमते स्वीयामृतत्वान्तरे॥४॥

ब्रह्मण्डे बहिरान्तरेऽपि परमे व्योमन्तरात्माक्षरे
ब्रह्मण्येव परात्परे रसतमे सोमामृतत्वोच्चरे॥
ब्राह्मोचेतनयाऽऽत्मसुस्वरतमे संविच्चिदात्मस्वरे
ब्रह्मानन्दरसे शिवो विरमते नृत्यञ्चिदात्माऽऽन्तरे॥५॥

पिण्डेऽन्तर्हृदि संस्थितस्तनुभृतां सञ्चेतनात्मानृणां
पिण्डात्माऽत्र शिखाग्रगो विरमते मूर्ध्र्यन्तरे प्राणिनाम्॥
सोमेनामृत सद्रसेन महसा नृत्यन् हृदामर्शने
स्वीयानाहवनादतो विलसति ज्योतिः सुसन्दर्शने॥६॥

टक्कानादमयाद् गुणाद् "अ इ उ ण" युक्तैर्हलन्तैर्निजैः
सूत्रैरत्र चतुर्दशैर्निजगुणैराद्याक्षराम्यायजैः॥
साहञ्चिन् स्वर वाग्रसामृतहृदा सन् साम् गायन्मुदा
स्वाहम्प्रत्ययं चेतनात्मनिविदा नृत्यत्ययं संविदा॥७॥

श्रीरुद्रः सपतिः पिता त्रिजगतां सन्स्त्र्यम्बक स्त्रीक्षणः
ज्ञानेच्छाकृतिशक्ति चेतनदृशा साग्नीन्दु सूर्येक्षणः॥
पुण्यैकात्मकृतेः सुगन्धिमुदितो मोक्ता समृत्योर्भयात्
पुष्टेः सत्त्व विवृद्धितो विवृद्धिता विरमते पूर्णामृतत्त्वा भयात्॥८॥

रुद्रदेवता स्वचित्ति विद्युना प्रकाशते
भद्रदोऽन्तरिक्ष सद्म सत्पदे विराजते॥
दैवतेन्द्र सार्वभौम योगतो विकासते
दैवरात् नृत्यगीत वाग्रसे प्रभासते॥९॥

****

॥दशमम्॥

॥भगवन् श्रीरुद्रभजनम्॥

भगवन् भर्ग समग्र विभूते
भावित भद्रद रुद्र नमस्ते॥भगवन्॥ध्रुवपदम्॥

॥आद्यं मङ्गल पद्यम्॥

यस्तु हिरण्य स रूपक बाहुः
भवतु हिरण्य भुजाय नमस्ते॥भगवन्॥
आप्राण खादखिलश्च सुवर्णो
दिव्याय हि पुरुषाय नमस्ते॥भगवन्॥

॥चिद् रूपाय नमः॥१

अस्तु सुरासुर सेनानयते
शरवण भव रूपाय नमस्ते॥भगवन्॥१॥
देवादि चराचर विनियन्त्रे
चिद्रूपाय हि रुद्र नमस्ते॥भगवन्॥२॥

॥दिशां च पतये नमः॥२

यस्तु दिशांपतिरिह हि दशानाम्
दशदा दीप्तिम् तेऽस्तु नमस्ते॥भगवन्॥३॥
ऐकादशतम दैवत कलया
तस्मै चितिपुरुषाय नमस्ते॥भगवन्॥४॥

॥ब्रह्मादिक रूपाय नमः॥

ये खलु वृक्षा हरित सुकेशाः
तस्मै हरिकेशाय नमस्ते॥भगवन्॥५॥
वृक्षस रूप विनश्वर भूते
ब्रह्मादिक रूपाय नमस्ते॥भगवन्॥६॥

॥पशूनां पतये नमः॥४॥

द्वि चतुष्पाद पशूनामवते
जगदधिपतये भवतु नमस्ते॥भगवन्॥७॥
यस्मै पशवो बलिमा दधते
तस्मै पशुपतयेऽस्तु नमस्ते॥भगवन्॥८॥

॥तस्मै कालपुरुषाय नमः॥५॥

प्रेरयितायः पतिरिह सुपथाम्
कालाय हि पुरुषाय नमस्तेे॥भगवन्॥९॥
दिव्यानामधिपाय हिताय
यानानामधिपाय नमस्तेे॥भगवन्॥१०॥
॥विद्युद् रूपाय नमः॥६॥
योे वृषभेे स्वं बिभ्रति शेेतेे
तस्मै बभ्लुश रुद्र नमस्तेे॥भगवन्॥११॥
बभ्लौ जलमभि बिभ्रतिशेेतेे
तस्मै वैद्युत रुद्र नमस्तेे॥भगवन्॥१२॥
॥वृष्टिम् तेे रुद्राय नमः॥७॥
भूतानि हि योे वृष्ट्यति विविधं
तृष्णादिक रूपाय नमस्तेे॥भगवन्॥१३॥
योे विव्याधी स्व वर्षणतेे
वृष्टिम् तेे रुद्राय नमस्तेे॥भगवन्॥१४॥
॥ज्योेतिर्मय रूपाय नमः॥८॥
तृप्त्यैतेेह सुवृष्टा जगता
मन्नानामधिपाय नमस्तेे॥भगवन्॥१३॥
रुद्रं वैद्युतमिन्द्रं ब्रुवतेे
ज्योेतिर्मय रूपाय नमस्तेे॥भगवन्॥१६॥
॥सस्पिञ्जर रूपाय नमः॥९॥
कष्टवारिह योे मिश्रित वर्णाः
सस्पिञ्जर रूपाय नमस्तेे॥भगवन्॥१७॥
यस्य हि हरिता सुवर्ण सुकेेशाः
तद् रूपाय हि रुद्र नमस्तेे॥भगवन्॥१८॥
॥हेेतुम् तेे रुद्राय नमः॥१०॥
संसरतः प्रभवत इह जगतेे
हेेतुम् तेे भवतेेऽस्तु नमस्तेे॥भगवन्॥१९॥
जातानान्तेेशामिह जगतां
संस्थिति हेेतुम् तेेऽस्तु नमस्तेे॥भगवन्॥२०॥
॥निःश्रेयस रूपाय नमः॥११॥

यस्मिन् जगदिदमखिलं शॆतॆ
तस्मै भवतु शिवाय नमस्तॊ॥भगवन्॥२१॥
यस्मिन् विधितॆ सुखमभि शॆतॆ
निःश्रॆयस रूपाय नमस्तॆ॥भगवन्॥२२॥

॥इति ऐकादश कला परिपूर्णम्॥

वॆदॊविदित परदैवत मूर्तॆ
वॆद्याय हि पुरुषाय नमस्तॊ॥भगवन्॥२३॥
वॆदनुतॆ दैवरात हृदन्तॆ
दिव्याय हि पुरुषाय नमस्तॊ॥भगवन्॥२४॥

॥इति श्री रुद्रभजनम् समाप्तम्॥

****

॥एकादशम्॥

॥स्वानन्द गानम्॥

अस्तितास्व भावबोधि चेतना प्रकाशते
स्वस्ति शान्ति शक्तिचिन्नि केतना विराजते॥
हस्ति चित्क्रियात्मकेन्द्र देवते सदस्तिते
हस्तिनेऽसुसत्त्वने चिदात्मने नमोऽस्तुते॥१॥
सोम सूर्य वह्नि सन्दृशेसते चिदात्मने
सेषणा क्रियप्त संविदात्म चित्ति सत्त्वने॥
सर्वधीन्द्रियादि साक्षिणे सते स्वरात्मने
सर्व वस्तु सत्त्वने नमोऽस्तुते रसात्मने॥२॥
निर्गता चिदग्निकुण्ड मूलतो विमृम्यतां
विद्युदात्मिका विभूति सद्यवाऽन्तरिज्यताम्॥
पूर्वतो दृशंनिवर्त्य पश्चिमा प्रतीक्ष्यतां
प्रत्यगात्मदेवता हृदन्तरे निरीक्ष्यताम्॥३॥
ईक्षितुं न शक्यते तदेकमेतदद्भुतं
साक्षिभूतमेव किञ्चिदान्तरं महद्द्युतम्॥
नास्तमेति नाप्युदेति तन्महः सदोदितं
नामरूप वर्जितं निनादवः प्रमोदितम्॥४॥
ईक्षितुं तदात्मवस्तु दीन्द्रियं यदेष्यते
साक्षिधीन्द्रिय त्वमेव नश्यतीति शिष्यते॥
ईक्ष्यमीक्षणं च नश्यदीक्षितैव शिष्यते
सेक्षिताऽपि सत्यचित् सदीक्षयाऽविशिष्यते॥५॥
सत्यमात्मवस्तु तत् समीक्ष्यमेव नोभवेत्
तत्कथं तदीक्षणं विमर्शनेन भावयेत्॥
ईक्षितृस्वभावयुक्तमेव तत् समीरयेत्
ईक्ष्यमीक्षणं च वस्तुतोऽत्र नेप्युदीरयेत्॥६॥
सामरस्य योगतः स्वभावतः समास्यतां
सौम्यरस्य भावतः स्वरूपतोऽध्युपास्यताम्॥
साक्षिसत्त्वचेतना स्वसंविदा विमृश्यतां
साक्षिणा परात्मना स्वयंहृदाऽनुदृश्यताम्॥७॥

वॆद सद्रस स्वरात्म वाक्सुधा रसायनं
दॊवता चिदात्म सत्त्व यॊग संविदाऽयनम्॥
दैवतॆन्द्र सत्त्वसॊमरस्य हृत्समायनं
दैवरात नृत्यगीत नन्दरस्य गायनम्॥८॥

****

॥द्वादशम्॥

॥भारती भारतम् मातृभूमिस्तवनम्॥

श्रीमद् भारत मातृभूमि विजय स्वानन्द सन्दोहिनी
श्रद्धाभारतमातृभूमि निचय ध्येयानुसन्धायिनी॥
नादब्रह्मपराऽक्षराऽभयकरा ब्रह्मात्मवित्केतना
नाम्ना ब्रह्मरसात्म शान्तिनिकरा ब्राह्मीपराचेतना॥१॥

॥भारतं मातृभूमिः॥१

श्री गो भू वेद धर्म प्रणय विनय धी वेद विद्यादि पूर्णं
सम्पन्नं सर्वरत्नैः पशुभिरपि जनैः सत्त्वशीलैः सुवीर्यैः॥
अन्नैः सञ्जीवनीयैः फलरसकुसुमैरौषधैः प्राणसत्त्वैः
सर्वैश्वर्यैः समृद्धं जगति परमिदं भारतं मातृभूमिः॥१॥

॥भारतं योगभूमिः॥२

प्रत्यक्षैकाधिभूत प्रकृति हितकला सत्क्रियासत्त्वयोगात्
पारोक्षैशाधिदैव प्रणिहितपरधी भावना हृत्प्रयोगात्॥
अध्यात्मैकापरोक्ष प्रचुरतर तपो ध्यान निष्ठादि भावात्
तत्त्वैक्यादि प्रधानं जगति परतमं भारतं योगभूमिः॥२॥

॥भारतं धर्मभूमिः॥३

विश्वस्यापि प्रसादात् समहृदि जगतो धर्म एव प्रतिष्ठा
विश्वेषां सौमनस्यात् सपदि तनुभृतां प्राणसञ्जीवनेष्ट्या॥
ज्ञानैर्भावनकृत्या समरस मनसा यज्ञयोगप्रयुक्त्या
जीवानां धारणेष्टं जगति परतमं भारतं धर्मभूमिः॥३॥

॥भारतं शान्तिभूमिः॥४

अध्यात्मान्तर्य योगात् प्रणहित परधी ज्ञानविज्ञानपूर्णं
स्वाध्यायैकाधिविद्याभ्युदितपरसुधी वेदविद्याभ्युदीर्णम्॥
सत्येष्ट्या सत्त्ववृत्त्या सुविहित तपसा सामरस्यानुभूतेः
स्वात्मानन्दैक सत्त्वात् स्वयमुदितमिदं भारतं शान्तिभूमिः॥४॥

॥भारतं सत्यभूमिः॥५

सत्यं ब्रह्माक्षरात्मामृतरस निरतं सर्व विज्ञानसत्त्वं
संवित्सत्त्वात्मसत्ताकृतमति नियतं संस्कृतिप्राणसत्त्वम्॥
ब्राह्मी सञ्चेतनात्मा समरस कलिता स्वानुभावाधिभूमा

भासाचिद्धारतात्मा जगति विजयते भारतं सत्यभूमिः॥५॥

॥भारतं तपो भूमिः॥६

ब्रह्मात्मज्ञानभूत्या सकल सुखकृते विश्वविद्याविभूत्यै
ब्रह्मानन्दानुभूत्या समहृदयकृतेर्विश्वतोऽसद्विमुक्त्यै॥
मन्वादीनामृषीणां सुनियत तपसा पारमार्थे प्रपञ्चे
सर्वार्थे भारतं वै प्रभवति महसा तत्तपो भूमिरिष्टा॥६॥

॥भारतं भक्तिभूमिः॥७

वाचा प्राणेन चान्तः प्रणहित मनसा सत्क्रिया सत्त्ववृत्या
नाम्ना मन्त्रेण साम्ना प्रतिनिहितदृशा ज्ञानभावानुकृत्या॥
भद्रा श्री भारतीष्टा भगवति भवती श्रद्धया प्रेमनित्या
भक्त्यै भुक्त्यै विमुक्त्यै प्रभवति सुहितं भारतं भक्ति भूमिः॥७॥

॥भारतं वेदभूमिः॥८

वेदो विश्वाधिदेवः सकलहिततमो विश्वविज्ञानपूर्णः
वेदो विश्वाधिविद्यः सकल रसतमो विश्ववेत्ताऽभुदीर्णः॥
वेदात्मा ब्रह्ममात्रा भगवदभिहिता भारती भारतेष्टा
वेदित्रा वेदमात्रा जयति भगवता भारतं वेदभूमिः॥८॥

॥भारतं ज्ञानभूमिः॥९

प्रज्ञानात्मैकसिद्धा समरस लसिता विश्वरूपाऽभ्युदीर्णा
प्रत्यक्चित्या समृद्धा सदसदतिनता वाक् सुविज्ञानपूर्णा॥
प्रज्ञा प्राणप्रतिष्ठा तपसिसुनिरता भासि भासाऽऽत्मभूतिः
प्रज्ञेयात्माभिवृद्धाऽध्युपनिषदुदिता भारती ज्ञानभूमिः॥९॥

॥भारती विश्वभूमिः॥१०

विश्वेषां नामरूप प्रकृतिक वपुषां साक्षरा शब्दशक्तिः
वस्तूनां वाचकात्मा प्रणवतनुजुषां सस्वरा नादमूर्तिः॥
ब्रह्माणी ज्ञानभूमा परमरसकला बिन्दुसत्त्वा विभूतिः
ब्रह्मण्या व्योम धाम्ना प्रभवति भवती भारती विश्वभूमिः॥१०॥

॥भारती भारतम्॥

॥चिरम् विजयते तराम्॥

वेद सद्रसस्वरात्म चित्कला प्रपूरितम्
वेद वाक् सुसंविदात्म चन्द्रिका प्रतीरितम्॥

दैवतेन्द्र भासि सद्रतं सदाऽस्ति भारतम्
दैवरात वाङ्मुखादुदीर्णमस्तु भारतम्॥

॥इति श्री भारत मातृभूमिस्तवनम् समाप्तम्॥

****

॥त्रयोदशम्॥

॥अक्षरमाला॥

ओमिति योऽसौ स्वरति बलीयः प्राणो बहिरदसाऽक्षिणिमेवः।
ओमित्ययमहमाऽन्तर्ज्ञेयः सोऽसावयमिति तपसा ध्येयः॥१॥

अः प्रथमाक्षरमात्राविदितः सार्वत्रिक आदित्यविदुदितः।
अमिदं ध्यात्वा ऋग्भिर्लोके स्वनुभवति हि महिमानं प्रथमे॥२॥

आत्मरसात् स्वयमाश्रितविदुषः स्वात्मनि समभिनिवेशयिता यः।
आनन्दं तं परमिह लब्ध्वा परमभयं प्राप्नोति विदित्वा॥३॥

इन्ध इति प्रमितोऽयं पुरुषो योऽसौ पुनरक्षिणि विनिविष्टः।
ऐञित्याहुरदर्शमितीदं तमिमं सन्तमिदं द्रमिहेन्द्रम्॥४॥

इष्टे जगतामिति स पुराणो भूतानामिह पर ईशानः।
ईशाना सा परमा शक्तिर्या परमस्य प्रथमा दृष्टिः॥५॥

उमया सहितं तं परमेशं ध्यात्वा मृत्युं तरति स शोकम्।
विति ध्यात्वा मात्राद्वितयं यजुषा सोमं जयति स लोकम्॥६॥

ऊर्ध्वमधस्ततममृतं पुरतो दक्षिणतश्चोत्तरतः परितः।
ऊर्जमुपैति हि हृदि भूमानं परमं तमपि च दृष्ट्वाऽऽत्मानम्॥७॥

ऋतमिति यत्परमं पदमुक्तं तदिह महाव्रतमिति परिगीतम्।
ऋच्छति तेन च परमममृतत्वं हित्वा मानुष्यकममृतत्वम्॥८॥

ॠकारेऽक्षरशक्त्या सहितौ मोचिकयाऽतिथिवामनदेवौ।
ॠकारोऽक्षरदैवतविद्भिर्विन्यस्यो नसि वामे सद्भिः॥९॥

ऌतिवर्णे नवमे सह शक्त्या स्थाणुश्रीधरदेवौ परया।
ऌत इह दक्षिणगण्डे विदितो विन्यासः खलु शक्तागमनः॥१०॥

ॡकारे हरिरुदितो दशमः सूक्ष्मा शक्तिर्हर इह परमः।
ॡकारोऽक्षरतत्त्वसुवेद्यो वामे गण्डे खलु विन्यसः॥११॥

एतोभिर्निखिलं परितप्तं दृष्ट्वा परितः परमाकुलितम्।
अनन्तं परिगृह्य हि लोकं परदेवो वः शमयतु शोकम्॥१२॥

ऐमिति निगमचतुष्टयमूलां वाचं देवीमाहुरमूलाम्।
ऐमिति वाचकबीजकजपतः सद्यो वाग्मी भवति सयुक्ता॥१३॥

ओमिति यदिदं खमिति निगदितं परममनन्तब्रह्म तदुदितं
ओमित्येतेन हि समुपास्यं तदिदं प्रणवस्येह रहस्यम्॥१४॥

औपनिषदपरतत्त्वमिहेदं वेद्यं वस्त्वखिलैः परमेकम्।
औदासीन्यं बहिरिह विषयेष्वौदार्यं जगतामुपकृतये॥१५॥
अन्तर्बहिरपि समभिनिगूढं रूपं चित्परमस्य तदेकम्।
अन्तरिहैव हि रहसिगुहायामन्तर्वेदद्दशैव सुगम्यम्॥१६॥
अस्तीति श्रुतमिदमिति कैश्चिद् युक्तं नास्तीत्येव कुतश्चित्।
अस्तीत्येव तदुपलब्धव्यं तदिदं त्वपरोक्षादनुभाव्यम्॥१७॥
कः प्रजनानां पतिरिह पूर्णः प्राणयिता हृदि यः पवमानः।
कमिति श्रुतिमिह तदु समुपास्यं यदिदमुपस्थितमन्तर्हृदयम्॥१८॥
खमिति श्रुतमपि यद्वा प्रथितं कमिह तदिष्टं कमपि खमुदितम्।
खमिदं संस्थितमन्तर्हृदये तत्र च सर्व तद्धृदयं खे॥१९॥
गः प्रथमं रूपं तदकारो मध्यममन्त्यं तदनुस्वारः।
गमिति हि गणपतिरिह सह नमसा रहसि चतुर्थ्यां हृदि समुपास्यः॥२०॥
घनगर्जितमिव यच्छ्रुतमभितो मूर्धन्यनुहतमिह गतमन्तः।
घटयति गीतमिहैव हि चेतः परमिदमनुजानीहि सुचेतः॥२१॥
ङादय इह खलु यमनु स्वरिताः पवनोऽयं नसि पाप्मनि विद्धः।
नासिक्यं परिहीय तदन्यं समुपासीत परं हृदि मुख्यम्॥२२॥
चत्वारि प्रमितानि हि वाचः प्रणवव्याहृतिकानि पदानि।
चातुर्थ्यं तु वदन्ति मनुष्यास्त्रीणि गुहायां विदुरिह मुनयः॥२३॥
छन्दांसि हि यस्मिन् परितस्थुर्यत्परमं पदमक्षरमूचुः।
छन्दोगानां तदिहोद्गीथः सोऽयमसौ स्वर इति समुपास्यः॥२४॥
जपनीयौ सस्वरमुपदिष्टौ स्वरतो योऽसावयमप्युदितौ।
जानातीत्यनु यत्परिगीतं तत्परमं विदुरिममुद्गीथम्॥२५॥

****

॥श्री वासिष्ठाष्टकम्॥

श्रीमन्महर्षिं रमणं यतीन्द्रं, प्रज्ञानमूर्तिं परमं गुरुं स्वम्॥
गुरुं च वासिष्ठमुनिं कवीन्द्रं, योगादुपास्ते हृदि दैवरातः॥

श्रीमत्सर्वज्ञकल्पः सकलगुणनिधिः पूजनीयः परात्मा
साक्षाद् विद्येशवाचस्पतिरिव सकल श्रौततत्त्वार्थवेत्ता॥
अन्तेवासी महर्षेः रमणभगवतो राजयोगी तपस्वी
वासिष्ठः श्रीमुनीन्द्रो जयति गणपतिः काव्यकण्ठः कवीन्द्रः॥१॥

यस्य श्री भारती सा करकमलगता प्रेमभावादुदीर्णा
काव्यालङ्कारपूर्णा सकलरसकलाऽऽनन्दमावर्षयन्ती॥
जिह्वाग्रे नृत्यतीव स्वरससुरतदा नित्यमेवाविरासीद्
वासिष्ठः श्रीमुनीन्द्रो जयति गणपतिः काव्यकण्ठः कवीन्द्रः॥२॥

शक्तो ज्ञानक्रियाभ्यां पतिरपि विदुषां यस्तपोज्ञानयोगाद्
विद्यागर्वादिहीनो गुरुरिह जगतः सन्त्स्वयम्प्रज्ञ एव॥
बालोन्मत्तादिरूपोऽप्यदधिरिवसदा सर्वविज्ञानपूर्णः
वासिष्ठः श्रीमुनीन्द्रो जयति गणपतिः काव्यकण्ठः कवीन्द्रः॥३॥

श्रीविद्यापूर्णचन्द्रो विनयगुणकलाशीतलः प्रेमपूर्णः
प्रज्ञाशक्त्या प्रचण्डो घृणिरपि तपसा सर्वविज्ञानयोगात्॥
शान्तः सत्त्वप्रसादान्नतजनहितकृत् सामरस्यप्रसन्नो
वासिष्ठः श्रीमुनीन्द्रो जयति गणपतिः काव्यकण्ठः कवीन्द्रः॥४॥

यो नित्यं सच्चरित्रः सुविमलहृदयो दिव्यवाणीविभूतिः
ज्येष्ठप्राणात्मनिष्ठा प्रणिहितसुमतिः सत्यधर्मोर्जितात्मा॥
सत्यात्मा स्वात्मनैव स्वयमुदितपरासंविदा पूर्णविद्यो
वासिष्ठः श्रीमुनीन्द्रो जयति गणपतिः काव्यकण्ठः कवीन्द्रः॥५॥

ज्ञाने योगे वसिष्ठः स्वयमिह भगवान् सर्वविद्यास्वतन्त्रः॥

पूर्णोवाल्मीकिरन्यः कविकुलतिलको वेदवित् कालिदासः॥
लेखे नामानुरूपः प्रचुरतकृतेर्भारतार्थप्रकाशाद्
वासिष्ठः श्रीमुनीन्द्रो जयति गणपतिः काव्यकण्ठः कवीन्द्रः॥६॥

प्रज्ञानात्मप्रकीर्णः प्रणवरसमयो ब्रह्मणस्पत्युदीर्णः
प्रज्ञाशक्त्याऽवतीर्णो जगति कुलपतिर्भारतीपूर्णयोगात्॥
वेदार्थस्य प्रकाशाद्दृष्टिकुलतिलको विश्वविद्यातपस्वी
वासिष्ठः श्रीमुनीन्द्रो जयति गणपतिः काव्यकण्ठः कवीन्द्रः॥७॥

श्रीमद्विद्वद्वरेण्यः परमपुरुषहृदयोगतत्त्वप्रशस्ता
मुक्तात्त्मा प्रेममूर्तिः परमरसमयः सत्यमन्त्रो मनस्वी॥
सत्यज्ञानामृतात्मा प्रभुरमलयशा ज्येष्ठराजः सुधार्णः
वासिष्ठः श्रीमुनीन्द्रो जयति गणपतिः काव्यकण्ठः कवीन्द्रः॥८॥

सर्वेषां प्राणिनां स्वः परमसुखकरः सद्विभूतिः सुकीर्तिः
सर्वैः सम्पूजनीयो जनसुखनिरतः स्वाश्रयः सज्जनानाम्॥
वासिष्ठः श्रीमुनीन्द्रो जगति गणपतिः सर्वकामप्रपूर्त्यै
संसेव्यो दैवरातप्रमुदितकवितास्रग्धरास्रग्धरोऽसौ॥९॥

सद्गुरुप्रसादवाक्सुपुष्पपद्यमालिका
श्रीवसिष्ठभूमुनीन्द्रकाव्यकण्ठमौलिका॥
सर्ववित्सुधाप्रपूर्णवेदचन्द्रिकालिका
दैवरातहृत्प्रफुल्लवाक्प्रसूनमल्लिका॥

॥इति श्रीवासिष्ठाष्टकं सम्पूर्णम्॥

****

॥श्रीरमणाविभक्त्यष्टकम्॥

श्रीमत्पराशरोऽयं प्रमुदितवदनः पावनः पार्वतीयः
प्रत्यग्दृग् देवकल्पो विगतभवभयः सर्वदा सुप्रसन्नः॥
आत्मन्येव प्रलीनः सकलगुणनिधिर्मौनमुद्रोपपन्नो
दृष्टः संतृप्तचित्तो "रमणमुनिरहो"? सच्चिदानन्दलीनः॥१॥

यं दृष्ट्वैवासिष्टंभवति पुनरहो? नेह कर्तव्यतायां
सद्यश्चित्तप्रसादाद्विगलति मनसः सर्वसङ्कल्पजालम्॥
वृत्तिः शाम्यत्यनेका विधिमनुजनिता द्वेषिणो वा निषेधात्
सन्तं पाराशरं तं गुरुरमणयतिं सन्ततं चिन्तयामि॥२॥

येनेयं चित्रसृष्टिर्बाहिरिव मनसा स्वप्नवत् सम्प्रदृष्टा
दृष्टिः प्रत्यग्गताऽपि प्रणतभयहरी संविमृष्टा दयार्द्रा॥
स्वार्थाः सङ्गस्य हानात् तदनुगतधियः सर्वतः सन्निरस्ताः
त्रातस्तेनेह मर्त्यो रमणभगवता धन्यतां याति सद्यः॥३॥

यस्मै तत्त्वार्थवेत्रे परमपविदे स्वात्मनो बोधयित्रे
स्वानन्दस्यापयित्रे जनिमरणभयात् प्राणिनस्त्राणयित्रे॥
स्वात्मानं प्राप्य बुध्या शरणमुपगता धन्यता यान्ति लोकाः
तस्मै पाराशरायों रमणभगवते ज्ञानदात्रे नमस्ते॥४॥

यस्मात् सम्पूर्णकामाद् विगतकलिमलाद् दिव्यवागात्मदेहान्
नित्यं प्रद्योतमानाज् जगति हि तपसा संस्थितप्रज्ञतोऽन्यः॥
सन्तप्तानां प्रजानां विषयविषधरैर्नैवकश्चिच्छरण्यः
तस्मात् पाराशरान्मे रमणमुनिवरादात्मनः संविदस्तु॥५॥

यस्याहंमेमतिर्हि स्वयमिह गलिता संविदेवावशिष्टा
धर्माधर्मप्रपञ्चः सह विधिभिरहो सन्प्रशान्तो निषेधैः॥
इष्टानिष्टे समाने स्थितिरपि जगति प्राणिनां वा हितार्था
तस्येदं पादयुग्मं रमणभगवतः सम्प्रपद्ये शरण्यम्॥६॥

यस्मिन्नत्याश्रमस्थे ह्यभमुपगते वीतवर्णप्रपञ्चे
ब्रह्मिष्ठे नित्यतृप्ते परमरसनिधौ सिद्धयोऽष्टौ प्रणम्राः॥
कामाश्च प्राप्तु कामाः सुखमिह परमं संविशन्तीव नित्यं
तस्मिन् पाराशरे मे रमणमुनिवरे धीन्द्रियाण्यारमान्तम्॥७॥

स्वामिन् त्सर्वार्तिहारिन्नय परमगुरो निर्मलज्ञानमूर्ते
वासिष्ठस्य प्रसादात् तव चरणयुगं प्राप्य सर्वैर्दुरापम्॥
पूर्णाः कामा इहेति प्रणिहितमनसा धन्यतां भावयन्तं
त्राहीमं पापजालाद् रमण मुनिपते? "दैवरातं" प्रपन्नम्॥८॥

"रमणं" रमणीयचिद्विकासं शरणं संस्मरणीयसद्विलासम्॥
परमं परमार्थतत्त्वबोधं कलये कल्मषकीलनप्रबोधम्॥

॥इति श्री दैवरातविरचितं श्रीरमणविभक्त्यष्टकं सम्पूर्णम्॥

****